श्रीनाथ-सम्प्रदाय

(एक संक्षिप्त परिचय)

मुद्रक एवं प्रकाशक :

चन्द्र अघोर आश्रम

सुकुरहुट्टू, रिंग रोड, रांची

श्रीनाथ–सम्प्रदाय

नाथ सम्प्रदाय भारत का परम प्राचीन, उदार, समदर्शी भावना से ओतप्रोत, अवधूत अथवा योगियों का सम्प्रदाय है। इसका आरम्भ आदिनाथ भगवान शिव से हुआ है और इसका वर्तमान रूप देने वाले योगाचार्य शिवावतार बालजति श्री गोरक्षनाथ जी हुए हैं। इस परम्परा का तथा इसके प्रवर्तक योगेश्वरों के प्रादुर्भाव और विलय का कोई भौतिक वर्णन प्राप्त नहीं होता है क्योंकि योगीजन देश, काल, स्थितिभेद से परे होते हैं।

गोरक्ष नाथ जी महाराज ने चारों युगों में चार भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में प्रगट होकर योग मार्ग का प्रचार किया और सामान्य मनुष्य, चक्रवर्ती सम्राट और साथ ही अनेक दैवीय अवतारों को भी उपदेशित किया। गुरु गोरक्षनाथ जी सत्ययुग में पंजाब के पेशावर में, त्रेतायुग में गोरक्षपुर में, द्वापर युग में द्वारिका के आगे हुरभुज में और कलिकाल में काठियावाड़ की गोरखमढ़ी में प्रादुर्भूत हुए थे, ऐसा योगियों की परम्परा में प्रसिद्ध है।

श्री गोरक्षनाथ जी ने योग सम्बन्धी सिद्धसिद्धांतपद्धति, गोरक्ष संहिता आदि अनेकों ग्रन्थ संस्कृत भाषा में लिखे जिनमें बहुत से प्रकाशित हो चुके हैं और कई अप्रकाशित रूप में योगियों के आश्रमों में सुरक्षित हैं। श्री गोरक्षनाथ की शिक्षा एवं चमत्कारों से प्रभावित होकर अनेकों बड़े–बड़े राजा इनसे दीक्षित हुए। उन्होंने अपने अतुल वैभव को त्याग कर निजानन्द प्राप्त किया तथा जन–कल्याण में अग्रसर हुए। इन राजर्षियों द्वारा बड़े–बड़े जन कल्याण के कार्य हुए।

श्री गोरक्षनाथ ने सांसारिक और गुरु शिष्य परम्परा और मर्यादा की रक्षा के निमित्त श्री मत्स्येन्द्रनाथ को अपना गुरु माना और चिरकाल तक इन दोनों में शंका समाधान के रूप में संवाद चलता रहा। श्री मत्स्येन्द्र महागुरु को भी आगमशास्त्र में नारायण का अवतार माना गया है और अनेक जगह इनकी कथाएँ लिखी हैं।

भारत के प्रायः सभी प्रान्तों में योगी सम्प्रदाय के बड़े–बड़े वैभवशाली आश्रम हैं और उच्च कोटि के विद्वान् इन आश्रमों के संचालक हैं। श्री गोरक्षनाथ का नाम नेपाल देश में वंदनीय है और वर्तमान में नेपाल के राजा इनको अपना प्रधान गुरु के रूप में मानते हैं और वहाँ पर इनके बड़े–बड़े प्रतिष्ठित आश्रम हैं। यहाँ तक कि नेपाल की राजकीय मुद्रा (सिक्के) पर श्रीगोरक्ष नाथ जी का नाम है और वहाँ के एक प्रांत के निवासी गोरखा कहलाते हैं।

इस सम्प्रदाय में पंच गुरु होते हैं यथाः– चोटी गुरु, चीरा गुरु, उपदेशी गुरु, भस्मी गुरु, लंगोट गुरु आदि। श्री गोरक्षनाथ ने कर्ण छेदन– या चीरा चढ़ाने की प्रथा प्रचलित की थी, यह एक यौगिक क्रिया के साथ दिव्य साधना रूप की परीक्षा भी है। कान चिराने को तत्पर होना तथा कष्ट सहन की शक्ति, दृढ़ता और वैराग्य का बल प्रकट करता है।

श्री गुरु गोरक्षनाथ जी ने यह प्रथा प्रचलित करके अपने अनुयायियों और शिष्यों के लिये एक कठोर परीक्षा नियत कर दी। कान फाड़ने के पश्चात् मनुष्य बहुत से सांसारिक झंझटों से स्वभावतः या लज्जा से बचता है। लम्बी अवधि तक परीक्षा करके ही कान फाड़े जाते थे और अब भी ऐसा ही होता है। बिना कान फटे साधु को 'औघड़' कहते हैं और इसका आधा मान होता है।

भारत में श्री गोरखनाथ के नाम पर कई विख्यात स्थान हैं और इसी नाम पर कई महोत्सव मनाये जाते हैं। यह सम्प्रदाय अवधूत सम्प्रदाय है। अवधूत शब्द का अर्थ होता है "स्त्री रहित या माया प्रपंच से रहित" जैसा कि "सिद्धसिद्धान्तपद्धति" में लिखा हैः–

"सर्वान् प्रकृतिविकारानवधुनोतीत्यऽवधूतः।

"अर्थात् जो समस्त प्रकृति विकारों को त्याग देता है वह अवधूत है।"

पुनश्चः–

"वचने वचने वेदास्तीर्थानि च पदे पदे।
इष्टे इष्टे च कैवल्यं सोऽवधूतः श्रियस्तु नः॥

एक हस्ते धृतस्त्यागो भोगश्चैककरे स्वयम् ।
अलिप्तस्त्यागभोगाभ्यां सोऽवधूतः श्रियस्तुनः॥

जिसके प्रत्येक वचन में वेदसम्मत वाणी हो, जिसका प्रत्येक कदम तीर्थ के समान पावन हो, जिसकी प्रत्येक कामना में केवल मोक्ष हो, ऐसा अवधूत हमारे वैभव मङ्गल की वृद्धि का निमित्त बने। जिसने अपने एक हाथ में त्याग और दूसरे हाथ में भोग को धारण किया हो, किन्तु फिर भी त्याग भोग से लिप्त न होता हो, ऐसा अवधूत हमारे वैभव मङ्गल की वृद्धि का निमित्त बने।

नाथ योगी अलख (अलक्ष) शब्द से अपने इष्ट देव का ध्यान करते हैं। परस्पर **आदेश** शब्द से अभिवादन करते हैं। अलख और आदेश शब्द का अर्थ प्रणव या परम पुरुष होता है, जिसका वर्णन वेद और उपनिषद् आदि में किया गया है।

आत्मेति परमात्मेति जीवात्मेति विचारणे।
त्रयाणामैक्यसंभूतिरादेश इति कीर्तितः॥
आदेश इति सद्वाणीं सर्वद्वंद्वक्षयापहाम
यो योगिनं प्रतिवदेत्स यात्यात्मानमैश्वरं॥

(सिद्धसिद्धांतपद्धति)

"आ" आत्मा। "दे" देवात्मा/परमात्मा। "श" शरीरात्मा/जीवात्मा

आत्मा, परमात्मा और जीवात्मा की अभेदता ही सत्य है, इस सत्य का अनुभव या दर्शन ही आदेश कहलाता है। व्यावहारिक चेतना की आध्यात्मिकता प्रबुद्धता जीवात्मा और आत्मा तथा परमात्मा की अभिन्नता के साक्षात्कार में निहित हैं। इन तथ्यों का ध्यान रखते हुए जब योगी एक–दूसरे का अभिवादन करते हैं अथवा गुरुपद में प्रणत होते हैं तो आदेश–आदेश का उच्चारण कर जीवात्मा, विश्वात्मा और परमात्मा के तादात्म्य का स्मरण करते हैं।

जैसे सभी वैष्णव अपना सम्प्रदायगोत्र अच्युत बताते हैं, सभी शाक्त अपना सम्प्रदायगोत्र सांख्यायन या अज बताते हैं, वैसे ही सभी कौल अथवा

पाशुपत मतावलम्बी अपना सम्प्रदाय गोत्र ईश्वर अंश जीव अविनाशी की भावना के अनुसार निरंजन बताते हैं। नाथ सम्प्रदाय के सदस्य उपनाम जो भी लगते हों, किन्तु मूल आदिनाथ, उदयनाथ, सत्यनाथ, संतोषनाथ, अचलनाथ, गजबेली गजकंथड़ नाथ, चौरंगीनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, गोरक्षनाथ आदि नवनाथ चौरासी सिद्ध तथा अनन्त कोटि सिद्धों को अपने आदर्श पूर्वजों के रुप में मानते हैं। मूल नवनाथों से चौरासी सिद्ध हुए हैं और चौरासी सिद्धों से अनन्त कोटि सिद्ध हुए। एक ही 'अभय–पंथ' के बारह पंथ तथा अठारह पंथ हुए। एक ही निरंजन गोत्र के अनेक गोत्र हुए। अन्त में सब एक ही नाथ ब्रह्म में लीन होते हैं। सारी सृष्टि नाथब्रह्म से उत्पन्न होती है। नाथ ब्रह्म में स्थित होती है तथा नाथ ब्रह्म में ही लीन होती है। इस तत्त्व को जानकर शान्त भाव से ब्रह्म की उपासना करनी चाहिए।

जैसे शिवावतार भगवान् आद्यशंकराचार्य जी ने वेदान्त परम्परा से दशनामी संन्यासी अखाड़ों की स्थापना की वैसे ही शिवावतार भगवान् गोरक्षनाथ जी ने योग परम्परा से बारहपन्थी योगियों की स्थापना की। जॉर्ज वेस्टन ब्रिग्स ने 1891 ई० की जनगणना के अनुसार नाथपंथीय गृहस्थ, औघड़ और अवधूत योगेश्वरों को मिलाकर कुल संख्या 2,14,546 बताई थी। गोरक्षनाथ जी के द्वारा प्रवर्तित बारह पंथों के नाम हैं – सत्यनाथ, धर्मनाथ, रामके, नटेश्वरी, कपिलानी, भर्तृहरि बैराग, मन्नाथी, आईपन्थ, पागलपन्थ, पावपंथ, गंगानाथी और रावलपंथ। प्रत्येक पंथ का अपना एक विशेष साधना मुख्यालय तीर्थ है जो उस पंथ के लिए विशेष महत्व रखता है। पूर्वकाल में भगवान शिव ने अठारह पंथ बनाये थे और गुरु गोरक्षनाथ जी के बारह पंथ थे। प्राचीन समय में नाथ सम्प्रदाय के 30 पंथ हुआ करते थे, जिनमें वर्तमान समय में 12 पंथ ही शेष हैं। जिन्हें अवधूत भेग 12 पंथ की संज्ञा प्राप्त है।

श्रीलंका की परम्परा के अनुसार नवनाथों के नाम कुछ भिन्न हैं। उनमें शिवनाथ, ब्रह्मनाथ, विष्णुनाथ, गौरीनाथ, मत्स्येंद्रनाथ, भद्रनाथ, बुद्धनाथ, गणनाथ और अवलोकितेश्वरनाथ का नाम है। भारतीय परम्परा की तुलना में ये

सूची शिवनाथ के स्थान पर आदिनाथ, ब्रह्मनाथ के स्थान पर सत्यनाथ, विष्णुनाथ के स्थान पर सन्तोषनाथ, गौरीनाथ के स्थान पर उदयनाथ, गणनाथ के स्थान पर गजबेली, गजकंथड नाथ आदि संज्ञाओं को प्रतिस्थापित करती है। नेपाल की प्राचीन परम्परा में नवनाथों के नाम हैं – प्रकाशनाथ, विमर्शनाथ, आनन्दनाथ, ज्ञाननाथ, सत्यनाथ, पूर्णनाथ, स्वभानाथ, प्रतिभानाथ। महार्णव तन्त्र के वर्णनानुसार जड़भरत (जो पूर्वजन्म में भगवान् ऋषभदेव के सुभगनाथ पुत्र राजा भरत थे) का भी वर्णन नवनाथों की अवधूत श्रेणी में आया है।

इसके अतिरिक्त नवनाथों की नामावली की दो परम्पराओं का बोध और भी होता है। सुधाकर चन्द्रिका के अनुसार नवनाथों के नाम निम्न हैं – एकनाथ, आदिनाथ, मत्स्येंद्रनाथ, उदयनाथ, दण्डनाथ, सत्यनाथ, सन्तोषनाथ, कूर्मनाथ, जालन्धरनाथ। एक अन्य प्रचलित श्लोक के अनुसार नवनाथों के नाम निम्न भी हैं – गोरक्षनाथ, जालन्धरनाथ, चर्पटनाथ, अड़बंगनाथ, कानिफानाथ, मत्स्येंद्रनाथ, चौरंगीनाथ, रेवाणकनाथ, भर्तृहरिनाथ।

1. आदिनाथ

नवनाथ स्वरूप पर क्रमपूर्वक विचार किया जाये तो सर्वप्रथम आदिनाथ शिव का स्मरण होता है। वेद विज्ञान में शब्द से ही सृष्टि का प्रादुर्भाव माना गया है। इस अनन्त आकाश में प्रतिपल एक ध्वनि अनवरत स्पन्दन उत्पन्न करती रहती है। उसे ही नादब्रह्म कहते हैं। ॐ ही वह शब्द है जिसकी प्रतिध्वनि अनवरत रूप से अखिल ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। सृष्टि का जनक, देवों का देव, समस्त शक्तियों का स्वामी, समस्त सृष्टि जिससे सृजित और समाहित है, समस्त महायोगी उसी के रूप हैं, जो द्वैत और अद्वैत के विवाद से परे अनिर्वचनीय है, उसी परमतत्त्व को आदिनाथ नाम दिया गया है।

2. उदयनाथ (उमा पार्वती)

क्रम सोपान के अन्तर से उदयनाथ द्वितीय स्थान पर हैं और यह नाम भगवान् शिव की भार्या पार्वती को दिया गया है। सम्पूर्ण पृथ्वी उनका स्वरूप है।

यह समझना आवश्यक है कि यहाँ पृथ्वी से तात्पर्य केवल हमारे सौरमण्डल के इस पृथ्वी ग्रह से नहीं है, अपितु अन्तरिक्ष में जितने भी ग्रह, नक्षत्र और तारे हैं, उनका आधारमण्डल शिवभार्या पार्वती का स्वरूप है। पर्वत की पुत्री होने के कारण इन्हें पार्वती कहते हैं। जीव को सर्वप्रथम अपनी निजशक्ति से उत्पन्न, पल्लवित और पोषित करने के कारण इन्हें दिव्य शक्ति, महाशक्ति, धरणीरूपा, महीरूपा, पृथ्वीरूपा, प्रजानाथ, उदयनाथ, भूमण्डल आदि कहा गया है। यह शिव की निजा शक्ति हैं जो उनसे भिन्न नहीं होकर समस्त सृष्टि को सभी प्रकार से चलायमान एवं सक्रिय रखती हैं। आदिनाथ एवं उदयनाथ का ये महान दिव्य युगल समस्त दृष्टमान एवं बोधगम्य तत्वों का उत्पादन और भरण करता है। जहां शिव समस्त चराचर जगत में आत्मतत्व के नियन्ता हैं तो यह शक्ति उस चराचर जगत् का मूर्त रूप है।

उदय का शाब्दिक अर्थ उठना या प्रकट होना है अत: उदयनाथ को उदित होने या करने वाले देवता की संज्ञा दी जा सकती है। विश्वोदयादुदयनाथसनाथयास्मान् विश्व के उदय करने के निमित्त उदयनाथ हमें सनाथ करें।

3. सत्यनाथ (ब्रह्मा)

तृतीय स्थान पर सत्यनाथ नाम से ब्रह्मा पदस्थापित हैं, जिनको जलस्वरूप कहा गया है। सृष्टि के समस्त जीवों, चल व अचल पदार्थों के निर्माण में जल एक प्रमुख तत्त्व है। इन्हें प्रजापति लोकपति भी कहा जाता है। ज्ञान गुदड़ी नामक ग्रन्थ के अनुसार ब्रह्मा भी सृष्टि करने की इच्छा के कारण इस जगत प्रपञ्च में अपनी भूमिका का निर्वहन करते हैं।

आदि पुरूष इच्छा उपजाई, इच्छा साखत निरंजन मामही॥
इच्छा ब्रहमा, विष्णु, महेषा। इच्छा शारदा, गौरी, गणेषा॥
इच्छा से उपजा संसारा। पंच तत्व गुण तीन पसारा॥

(ज्ञान गुदड़ी)

4. सन्तोषनाथ (विष्णु)

चतुर्थ स्थान पर सन्तोषनाथ नामान्तर्गत विष्णु विराजित हैं, जो तेजस्विता लिये हुए हैं। भगवान् विष्णु सन्तुष्टि का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण हैं जो इस सृष्टि के संचालक, सन्तुलनकर्ता होते हुए भी निर्लिप्त व सन्तुष्ट भाव से अपने कर्तव्य का पालन करते हैं। शाब्दिक अर्थ में देखा जाए तो सन्तोष भौतिक संसाधनों पर स्वामित्व, महत्वाकांक्षाओं पर विराम और क्षमता आदि पर वर्तमान क्षण की स्थिति पर एक तटस्थ भाव को इंगित करता है अर्थात जो है और जैसा है उसकी निष्पक्ष स्वीकारोक्ति ही सन्तोष है। इसका अर्थ यह है कि एक वास्तविक योगी महल और कुटिया में तटस्थ भाव से समान रहता है। श्रीमद्भगवद्गीता में समत्वं योगं उच्यते कहकर समता को ही योग कहा गया है। सन्तोष के प्राप्त होने पर स्थायी शान्ति प्राप्त हो जाती है। योगीजन इस आन्तरिक शान्ति को प्राप्त होने के कारण बाहरी शान्ति पर निर्भर नहीं रहते। भारत में सिद्धजन कई परम्परा में अनेक नाम हैं जिन्होंने सन्तोष प्राप्त हो जाने के बाद अपने महान् आदर्श का परिचय दिया। किन्तु सन्तोष का तात्पर्य अकर्मण्य हो जाना नहीं है अपितु कर्मफल में आसक्त होने की स्थिति का नहीं रह जाना ही सन्तोष है। इसी बात को श्रीमद्भगवद्गीता में कहते हैं –

अनाश्रित: कर्मफलं कार्यं कर्म करोति य:।
स सन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः ॥

5. अचल अचम्भेनाथ (शेषनाग)

पाँचवें स्थान पर योगीश्वर अचम्भेनाथ नाम का उल्लेख है और इनकी प्रकृति अचल बतायी गयी है। श्रीमद्भगवद्गीता के दूसरे अध्याय में कहते हैं –

नित्य: सर्वगत: स्थाणुरचलोऽयं सनातन:॥

पृथ्वी को अपने फन पर स्थिर और अचल भाव से धारण करने के कारण शेषनाग को भी अचलनाथ कहा जाता है। सम्पूर्ण सृष्टि नित्य गतिमान है केवल वायु से बना (बोलचाल में अन्तरिक्ष) आकाश ही स्थिर और अचल है। यह आकाश

पृथ्वी की ब्रह्माण्डीय स्थिति में इसके ऊपर नीचे, सर्वत्र व्याप्त है। यह एक विलक्षण तथ्य है कि वायु भी स्थिर नहीं है और एक निश्चित परिधि के बाद आकाश वायु रहित हो जाता है, संभवत: योग की यही विलक्षणता योगियों का ध्येय है।

6. गजबेली कन्थड़ नाथ (गणेश)

छठे स्थान पर गणेश जी के अवतार योगीश्वर को गजकन्थड़ नाथ नाम दिया गया है। मुद्गल पुराण में अङ्गिरा ऋषि ने संसार के समस्त अवयवों को गण और उनके स्वामी ब्रह्म को गणेश के नाम से बताया है। गणेश अर्थात समूह का नेतृत्व करने वाला जो ऋद्धि और सिद्धियों को देने वाला है। गणेश के अन्य नामों में विघ्नेश अर्थात् विघ्न का नाश करने वाला, उन्हें उत्पन्न, समाप्त या नियंत्रित करने वाला प्रस्तुत विषय के सन्दर्भ में उल्लेखनीय है। इस प्रकार किसी कार्य का निर्विघ्न संचालन एवं सफल समापन गणेश जी की अनुकम्पा पर निर्भर करता है। स्पष्ट है कि भौतिक समृद्धि ऋद्धि, और आध्यात्मिक शक्ति सिद्धि गणेश जी की कृपा से ही संभव है। यह निर्विवादित है कि अवसर मिलने पर 'त्याग' पुन: भौतिक सुखों की ओर लालायित होगा और जीती हुई इन्द्रियाँ पुन: अपने व्यवहार की ओर उन्मुख होंगी किन्तु भौतिक सुखों से संन्यास और माया से अप्रभावित व इन्द्रियों पर नियन्त्रण प्राप्त हो जाने की स्थिति में यह आशंका नहीं रहती।

7. चौरंगीनाथ (चन्द्रमा)

सातवें स्थान पर वनस्पतियों के जीवनदाता चन्द्रमा को चौरंगीनाथ नाम दिया है। शाब्दिक अर्थ के सन्दर्भ में चौरंगीनाथ एक निश्चित आकार रहित पुरुष किन्तु पूर्ण ज्ञान के प्रतीक हैं। नवनाथों में इन्हें अपने सम्मोहन, रोगहरण और सौन्दर्य के लिए विशेष महत्त्व दिया जाता है। नवनाथों की सूचियों में कहीं–कहीं चौरंगीनाथ के स्थान पर कूर्मनाथ भी अंकित किया गया है।

8. मत्स्येन्द्रनाथ (मायारूप)

नवनाथों में सबसे अधिक चर्चित नाम मत्स्येन्द्रनाथ तथा गोरक्षनाथ हैं। मत्स्येन्द्रनाथ को माया स्वरूप कहा गया है। संस्कृत में मा का अर्थ **'नहीं'** है

तथा या का अर्थ **'है'** है। अर्थात जो नहीं है किन्तु फिर भी है और इसके उलटक्रम से जो है किन्तु फिर भी नहीं है, वह माया है। मत्स्येन्द्रनाथ को दादागुरु कहा जाता है और जिस प्रकार परिवार में पितामह को अपने प्रपौत्रों से स्नेह व अनुराग होता है मत्स्येन्द्रनाथ को भी अपने पुत्र (शिष्य) महायोगी गोरक्षनाथ के पुत्रों (शिष्यों) से अनुराग है और परिवार में पितामह का अपने प्रपौत्रों की त्रुटियों को क्षमा करने की स्वाभाविक प्रवृति वाला होने से मत्स्येन्द्रनाथ को कृपालु भी कहा जाता है।

निःसन्देह सीखने की किसी भी पद्धति और प्रक्रिया में विद्यार्थी से त्रुटि होना संभव है तब नाथ सम्प्रदाय के दादा गुरु मत्स्येन्द्रनाथ जी कृपापूर्वक उन त्रुटियों को क्षमा कर देते हैं। नाथयोगियों की मान्यता अनुसार जीवन शिव और उसकी निजा शक्ति का खेल है और सम्पूर्ण चराचर जगत का प्रपंच शिव द्वारा स्थापित विधि के अनुरूप ही होता है। यदि जीव इस सत्य को पहचानने में असफल होता है तो यह उसके स्वयं के विवेक और दृष्टि की असमर्थता है और गुरु हमारे ज्ञान चक्षुओं को इस सत्य को पहचानने में समर्थ बनाता है। जीव जब दूसरों पर दोषारोपण की प्रवृत्ति को छोड़कर स्वयं के कर्मों के उत्तरदायित्व को स्वीकार करना प्रारंभ करता है तो जीवन का प्रत्येक क्षण स्वयं शिक्षक बन जाता है।

9. गोरक्षनाथ (अलक्ष्य बालरूप)

महायोगी गोरक्षनाथ को आदिनाथ शिव का ही अवतार मानते हैं और शिवस्वरूप मानने के कारण ही शिवगोरक्ष की संज्ञा से उच्चारित करते हैं। यद्यपि आदिनाथ सृष्टि के प्रथम देव हैं, किन्तु गुरु गोरक्षनाथ ने योगाभ्यास द्वारा स्वयं को उससे एकात्म कर लिया और इस प्रकार गोरक्षनाथ व आदिनाथ भिन्न नहीं हैं। गोरक्षनाथ नवनाथों में सर्वोपरि हैं और पवित्रता में आदिनाथ से अभिन्न होते हुए सृष्टि संचालन के लिये विभिन्न काल एवं भूखण्डों में प्रकट होते हैं। गोरक्षनाथ को एक बालक की भाँति निष्कपट, निष्पाप और निर्मल होने से

पार्वती का ऐसा पुत्र भी कहा जाता है जो सृष्टि के नियमों से परे, ब्रह्म से अद्वैत हैं और सभी देव, दानव, नर, किन्नर, यक्ष, गन्धर्व, नाग, वानर, चर, अचर, उभयचर आदि जीवों के नैसर्गिक गुण मैथुन से नितान्त निर्लेप होने के कारण जति संज्ञा से युक्त हैं।

महायोगी गोरक्षनाथ अयोनिज (जिनकी उत्पति मैथुन जनित परिणाम न हो) हैं। शिव की ही तरह अपने योगरूप में ही महायोगी गोरक्षनाथ के भी तीन नेत्र हैं। बायां नेत्र चन्द्रमा, दाहिना नेत्र सूर्य और भ्रूमध्य में ज्ञानचक्षु है जिसे शिवनेत्र भी कहा जाता है। ब्रह्म से अद्वैत हो चुके योगी के लिये कुछ भी घृणित और भयकारक नहीं रह जाता, क्योंकि उसे सब में स्वयं का ही आभास होने लगता है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने वासुदेवः सर्वमिति कह कर इस अद्वैत दर्शन को समझाया है तो नाथयोगियों द्वारा घट–घट वासी, गोरक्ष अविनाशी, टले काल मिटे चौरासी॥ कह कर गोरक्ष (शिवतत्त्व) के सर्वत्र व सभी में व्याप्त होने की अवधारणा की जाती है। गो का अर्थ वाणी, इन्द्रिय, ज्ञान और पृथ्वी भी है। इनके रक्षक और पालक होने और शेष पालकों के भी स्वामी होने से ये गोरक्षनाथ कहलाते हैं।

नाथ सम्प्रदाय के अनुयायी मुख्यतः बारह शाखाओं में विभक्त हैं, जिसे बारह पंथ कहते हैं । इन बारह पंथों के कारण नाथ सम्प्रदाय को 'बारह–पंथी' योगी भी कहा जाता है । प्रत्येक पंथ का एक–एक विशेष स्थान है, जिसे नाथ लोग अपना पुण्य क्षेत्र मानते हैं । प्रत्येक पंथ एक पौराणिक देवता अथवा सिद्ध योगी को अपना आदि प्रवर्तक मानता है ।

सर्वदर्शनसंग्रह में स्वामी माधवाचार्य ने शैव सम्प्रदाय की आरम्भिक तीन श्रेणियां क्रमशः लकुलीश–पाशुपत, शैव तथा प्रत्यभिज्ञा को सन्दर्भित किया है। पाशुपत सम्प्रदाय का उल्लेख महाभारत तथा पुराणों में व्यापकता से किया गया है। आदिनाथ शिव इस सम्प्रदाय के सर्वप्रथम उपदेशक और परमाराध्य हैं। इसकी ही विरक्त यौगिक शाखा नाथपन्थ के रूप में विकसित हुई। ये शैव मत के

तीन सिद्धान्तों पर सहमत हैं। ये पाशुपत सिद्धान्त क्रमशः

1. 'पति अर्थात शिव,   2. 'पशु अर्थात जीव अथवा आत्मा

3. 'पाश अर्थात् भय, घृणा, जुगुप्सा आदि आठ प्रकार का बन्धन जो आत्मा को भौतिकता में बांधे रखता है। सम्प्रदाय का उद्देश्य है – पशुपाशविमोक्षणाय। पशु का उसके पाश से मोक्ष हो जाये।

नाथ संप्रदाय की परंपरा में गुरु गोरक्षनाथ ने मध्यकाल में सामाजिक समरसता का सबसे बड़ा अभियान चलाया। उनके अभियान में हिंदू धर्म की विभिन्न जातियों को स्थान मिला। उस समय तो कई मुस्लिम भी नाथ संप्रदाय में दीक्षित हुए और सिद्ध के रूप में प्रतिष्ठा पाई। नाथ संप्रदाय का भारत के सामाजिक एवं सांस्कृतिक ढांचे के संरक्षण में अद्वितीय योगदान है। लंबे समय से विदेशी दासता झेल रहे समाज में इस संप्रदाय ने नई स्फूर्ति पैदा की और विद्वेष की भावना से परे जाकर आध्यात्मिक तत्व को समझने की दृष्टि पैदा की। आद्यशंकराचार्य की वेदान्त परम्परा के उद्देश्य को जन जन तक पहुंचाने में गुरु गोरक्षनाथ के मार्गदर्शन में इस संप्रदाय के आदि योगेश्वरों ने महापुरुषों की शृंखला में नये आयाम प्रदर्शित किए। तंत्र और योग ग्रंथों में श्री गुरु गोरक्षनाथ की कथाओं का विशद् वर्णन हुआ है। श्री गोरक्षनाथ को वर्णाश्रम धर्म से परे पंचमाश्रमी अवधूत माना जाता है।

रेवणनाथ : महाराष्ट्र के सोलापुर जिले में करमाला तहसील के वीट गांव में इनकी समाधि है। रेवणनाथ के पिता थे ब्रह्मदेव। सभी नाथों के जन्म की कथाएं आश्चर्य में डालने वाली ही हैं जिन पर आसानी से विश्वास करना मुश्किल होगा, लेकिन यही सच है। ऐसे ही एक महान नागनाथ हुए हैं। बहुत पहले ब्रह्मा का अंश एक नागिन के गर्भ में चला गया था जिससे बाद में नागनाथ की उत्पत्ति हुई।

चर्पटनाथ : नाथ सिद्धियों की बानियों का संपादन करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि ये चर्पट नाथ गोरखनाथ के परवर्ती जान

पड़ते हैं। इनका संबंध व्रजयानी संप्रदाय से हो सकता है। तिब्बती परंपरा में इन्हें मीनपा का गुरु माना गया है। नाथ परंपरा में इन्हें गोरखनाथ का शिष्य माना जाता है। इनके नाम से प्रसिद्ध वाणियों (भजन) में इनके नाम का पता चलता है। ऐसा माना जाता है कि पहले ये रसेश्वर संप्रदाय के थे लेकिन गोरखनाथ के प्रभाव में वे नाथ संप्रदाय के हो गए।

चर्पटनाथ सिद्ध योगी थे। इस संबंध में लेखक नागेंद्रनाथ उपाध्याय ने लिखा है कि सिद्धि प्राप्त करने के बाद अनेक योगी अपने योग बल पर 300–400 से 700–800 वर्षों तक जीवित रह सकते थे। नागार्जुन, आर्यदेव, गोरखनाथ, भर्तृहरि आदि के विषय में इसी प्रकार का विश्वास किया जाता है। परिणामत: इन सिद्धों के कालनिर्णय में बहुत सी कठिनाइयां उत्पन्न हो जाती हैं।

सिद्धजन की भोग साधना के सापेक्ष योग–साधना की प्रतिक्रिया के रूप में आदिकाल में नाथपंथियों की हठयोग साधना आरम्भ हुई। इस पंथ को चलाने वाले मछंदरनाथ (मत्स्येन्द्रनाथ) तथा गोरखनाथ (गोरक्षनाथ) हैं। इस पंथ के साधक लोगों को योगी, अवधूत, सिद्ध, औघड़ कहा जाता है। कहा यह भी जाता है कि सिद्धमत और नाथमत एक ही हैं। सिद्धों की भोग–प्रधान योग–साधना की प्रवृत्ति ने एक प्रकार की स्वच्छंदता को जन्म दिया जिसकी प्रतिक्रिया में नाथ संप्रदाय शुरू हुआ। नाथ–साधु हठयोग पर विशेष बल देते थे। वे योग मार्गी थे। उनके अधिकांश सदस्य निर्गुण निराकार ईश्वर को मानते थे। निम्न वर्ग की जातियों के लोगों में से कई लोग पहुंचे हुए सिद्ध एवं नाथ हुए हैं। नाथ–संप्रदाय में गोरखनाथ सबसे महत्वपूर्ण थे। इनकी कई रचनाएं प्राप्त होती हैं। इसके अतिरिक्त चौरंगीनाथ, गोपीचन्द, भरथरी (भर्तृहरि) आदि नाथ पन्थ के प्रमुख कवि हैं। इस समय की रचनाएँ साधारणतः दोहों अथवा पदों में प्राप्त होती हैं, कभी–कभी चौपाई का भी प्रयोग मिलता है। परवर्ती संत–साहित्य पर सिद्धों और विशेषकर नाथों का गहरा प्रभाव पड़ा है। नाथ परम्परा की

शुरुआत बहुत प्राचीन रही है, किंतु गोरखनाथ से इस परम्परा को सुव्यवस्थित विस्तार मिला। गोरखनाथ के गुरु मत्स्येन्द्रनाथ थे। दोनों को ही नवनाथ चौरासी सिद्धों में प्रमुख माना जाता है।

गुरु गोरखनाथ को गोरक्षनाथ भी कहा जाता है। इनके नाम पर एक नगर का नाम गोरखपुर है। गोरखनाथ नाथ साहित्य के आरम्भकर्ता माने जाते हैं। गोरखपंथी साहित्य के अनुसार आदिनाथ स्वयं भगवान शिव को माना जाता है। शिव की परम्परा को सही रूप में आगे बढ़ाने वाले गुरु मत्स्येन्द्रनाथ हुए। ऐसा नाथ सम्प्रदाय में माना जाता है। गोरखनाथ से पहले अनेक सम्प्रदाय थे, जिनका नाथ सम्प्रदाय में विलय हो गया। शैव एवं शाक्तों के अतिरिक्त बौद्ध, जैन तथा वैष्णव योग मार्गी भी उनके सम्प्रदाय में आ मिले थे।

गुरु गोरखनाथ ने अपनी रचनाओं तथा साधना में योग के अंग क्रिया–योग अर्थात तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणीधान को अधिक महत्व दिया है। इनके माध्यम से ही उन्होंने हठयोग का उपदेश दिया। गुरु गोरखनाथ शरीर और मन के साथ नए–नए प्रयोग करते थे। गोरखनाथ द्वारा रचित ग्रंथों की संख्या 40 बताई जाती है जिसका संकलन 'गोरखबानी' मे किया गया है।

जनश्रुति अनुसार उन्होंने कई कठिन (आड़े–तिरछे) आसनों का आविष्कार भी किया। उनके अजूबे आसनों को देख लोग अचम्भित हो जाते थे। आगे चलकर कई कहावतें प्रचलन में आईं। जब भी कोई उल्टे–सीधे कार्य करता है तो कहा जाता है कि 'यह क्या गोरखधंधा लगा रखा है।' गुरु गोरखनाथ का मानना था कि सिद्धियों के पार जाकर शून्य समाधि में स्थित होना ही योगी का परम लक्ष्य होना चाहिए। शून्य समाधि अर्थात् समाधि से भी मुक्त हो जाना और उस परम शिव के समान स्वयं को स्थापित कर ब्रह्मलीन हो जाना, जहाँ पर परमशक्ति का अनुभव होता है। हठयोगी प्रकृति को चुनौती देकर उसके सारे नियमों से मुक्त हो जाता है और जो अदृश्य पराशक्ति है, उसे भी लाँघकर परमशुद्ध प्रकाश ब्रह्मरूप हो जाता है।

नाथ सम्प्रदाय गुरु गोरखनाथ से भी पुराना है। गोरक्षनाथ जी से पूर्व भी मत्स्येंद्रनाथ आदि ने इसका विस्तार और रक्षण किया। गुरु गोरखनाथ ने इस सम्प्रदाय के बिखराव और इस सम्प्रदाय की योग विद्याओं का एकत्रीकरण किया। पूर्व में इस सम्प्रदाय का विस्तार कामरूप असम और उसके आसपास के इलाकों में ही ज्यादा रहा, बाद में समूचे प्राचीन भारत में इनके योग मठ स्थापित हुए। आगे चलकर यह सम्प्रदाय भी कई भागों में विभक्त होता चला गया।

एक जनश्रुति के अनुसार प्राचीन काल में सियालकोट नामक राज्य में शंखभाटी नाम के एक राजा थे। उनके पूर्णमल और रिसालु नाम के पुत्र हुए। यह श्री गोरक्षनाथ के शिष्य बनने के पश्चात क्रमशः चौरंगीनाथ और मन्नाथ (माननाथ) के नाम से प्रसिद्ध होकर उग्र भ्रमण शील रहे, योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः सूत्र की अन्तिमावस्था को प्राप्त किया और इसी का प्रचार एवं प्रसार करते हुए जनकल्याण किया और भारतीय या माननीय संस्कृति को अक्षुण्ण बने रहने का बल प्रदान किया।

नाथ किसे कहते हैं, इस सन्दर्भ में नाथ लक्षण का वर्णन राजगुह्य के अनुसार निम्न है –

नाकारोऽनादिरूपश्च थकारः स्थाप्यते सदा।

अनादिरूप ब्रह्मस्थिति में स्थापित होने वाला ही नाथ है।

शक्तिसंगम तन्त्र में श्रीनाथ का लक्षण बताते हैं –

श्रीमोक्षदानदक्षत्वात् नाथब्रह्मानुबोधनात्।
स्थगिताज्ञानविभवात् श्रीनाथ इति गीयते॥

मोक्ष देने में दक्ष होने से श्री, तथा ब्रह्म का बोध कराने से नाथ, साथ ही अपनी शक्ति से अज्ञान को रोक देने के कारण परमशिव को श्रीनाथ कहा जाता है।

अवधूत लोग अद्वैत वादी योगी होते हैं जो कि बिना किसी भौतिक साधन के योगाग्नि प्रज्वलित करके कर्मविपाक को भस्म कर निजानन्द में रमण करते है और अपनी सहज शिक्षा के द्वारा जनकल्याण करते रहते हैं। तभी उपर्युक्त नाथ शब्द सार्थक होता है।

महायोगी गोरखनाथ सनातन धर्म के एक विशिष्ट महापुरुष थे। गोरखनाथ के गुरु मत्स्येन्द्रनाथ (मछंदरनाथ) थे। इन दोनों ने नाथ सम्प्रदाय को सुव्यवस्थित कर इसका विस्तार किया। इस सम्प्रदाय के साधक लोगों को योगी, अवधूत, सिद्ध, औघड़ कहा जाता है। गुरु गोरखनाथ हठयोग के आचार्य थे। कहा जाता है कि एक बार गोरखनाथ समाधि में लीन थे। इन्हें गहन समाधि में देखकर माँ पार्वती ने भगवान शिव से उनके बारे में पूछा। शिवजी बोले, लोगों को योग शिक्षा देने के लिए ही उन्होंने गोरखनाथ के रूप में अवतार लिया है। इसलिए गोरखनाथ को शिव का अवतार भी माना जाता है। इन्हें चौरासी सिद्धों में प्रमुख माना जाता है। इनके उपदेशों में योग और शैव तंत्रों का सामंजस्य है। ये नाथ साहित्य के आरम्भकर्ता माने जाते हैं। गोरखनाथ की लिखी गद्य–पद्य की चालीस रचनाओं का परिचय प्राप्त है। इनकी रचनाओं तथा साधना में योग के अंग क्रिया–योग अर्थात् तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान को अधिक महत्व दिया है। गुरु गोरखनाथ जी ने पूरे भारत का भ्रमण किया और अनेकों ग्रन्थों की रचना की। गोरखनाथ जी का मन्दिर उत्तर प्रदेश के गोरखपुर नगर में स्थित है। गोरखनाथ के नाम पर इस जिले का नाम गोरखपुर पड़ा है। गुरु गोरखनाथ जी के नाम से ही नेपाल के गोरखाओं ने नाम पाया। नेपाल में एक जिला है गोरखा, उस जिले का नाम गोरखा भी इन्हीं के नाम से पड़ा। माना जाता है कि नेपाल में गुरु गोरखनाथ सबसे पहले यहीं दिखे थे। गोरखा जिला में एक गुफा है जहाँ गोरखनाथ का पग चिन्ह है और उनकी एक मूर्ति भी है। यहाँ हर साल वैशाख पूर्णिमा को एक उत्सव मनाया जाता है जिसे रोट महोत्सव कहते हैं और यहाँ मेला भी लगता है।

मत्स्येंद्रनाथ और गोरखनाथ के समय के बारे में इस देश में अनेक विद्वानों ने अनेक प्रकार की बातें कही हैं। वस्तुतः इनके और इनके समसामयिक सिद्ध जालंधरनाथ और कृष्णपाद के संबंध में अनेक दंतकथाएँ प्रचलित हैं। नाथ सम्प्रदाय के प्रवर्तक गोरक्षनाथ जी के बारे में लिखित उल्लेख हमारे पुराणों में भी मिलते हैं। विभिन्न पुराणों में इससे संबंधित कथाएँ

मिलती हैं। इसके साथ ही साथ बहुत सी पारंपरिक कथाएँ और किंवदंतियाँ भी समाज में प्रसारित हैं। उत्तरप्रदेश, उत्तरांचल, बंगाल, पश्चिमी भारत, सिंध तथा पंजाब में और भारत के बाहर नेपाल में भी ये कथाएँ प्रचलित हैं।

गोरक्षनाथ जी के आध्यात्मिक जीवन की शुरूआत से संबंधित कथाएँ विभिन्न स्थानों में पाई जाती हैं। इनके गुरु के संबंध में विभिन्न मान्यताएँ हैं। परंतु सभी मान्यताएँ उनके दो गुरुओं के होने के बारे में एकमत हैं। ये थे– आदिनाथ और मत्स्येंद्रनाथ। गोरक्षनाथ जी के भ्रमण से संबंधित बहुत से कथन उपलब्ध हैं। नेपालवासियों का मानना हैं कि काठमांडू में गोरक्षनाथ का आगमन पंजाब से या कम से कम नेपाल की सीमा के बाहर से ही हुआ था। ऐसी भी मान्यता है कि काठमांडू में पशुपतिनाथ के मंदिर के पास ही उनका निवास था। कहीं–कहीं इन्हें अवध का संत भी माना गया है।

एक अन्य मान्यता के अनुसार श्री गोरक्षनाथ के द्वारा आरोपित बारह वर्ष से चले आ रहे सूखे से नेपाल की रक्षा करने के लिये मत्स्येंद्रनाथ को असम के कपोतल पर्वत से बुलाया गया था। कहते हैं सतयुग में उधोधर नामक एक परम सात्विक राजा थे। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनका दाह संस्कार किया गया परंतु उनकी नाभि अक्षत रही। उनके शरीर के उस अधजले अंग को नदी में प्रवाहित कर दिया गया, जिसे एक मछली ने अपना आहार बना लिया। तदुपरांत उसी रोहू मछ्ली के उदर से मत्स्येंद्रनाथ का जन्म हुआ। **यो ह्यादिनाथ उत राघवमत्स्यजन्मा मत्स्येंद्रनाथ इति....** उस अंश का आश्रय लेकर कवि नारायण ने मत्स्येंद्रनाथ का अवतार लिया और अपने पूर्व जन्म के पुण्य के फल के अनुसार वो इस जन्म में एक महान संत बने।

पंजाब में चली आ रही एक मान्यता के अनुसार राजा रसालु और उनके सौतेले भाई पूरनमल भगत भी गुरु गोरक्षनाथ से संबंधित थे। रसालु का यश अफगानिस्तान से लेकर बंगाल तक फैला हुआ था और पूरनमल पंजाब के एक प्रसिद्ध संत थे। ये दोनों ही गोरक्षनाथ जी के शिष्य बने और

पूरनमल तो एक प्रसिद्ध योगी बने। जिस कुएं के पास पूरनमल वर्षो तक रहे, वह आज भी सियालकोट में विराजमान है। रसालु सियालकोट के प्रसिद्ध सालवाहन के पुत्र थे।

बंगाल से लेकर पश्चिमी भारत तक और सिंध से राजस्थान पंजाब में गोपीचंद , रानी पिंगला और राजा भर्तृहरि से जुड़ी एक और मान्यता भी है। इसके अनुसार गोपीचंद की माता मानवती को भर्तृहरि की बहन माना जाता है। भर्तृहरि ने अपनी पत्नी रानी पिंगला की मृत्यु के पश्चात् अपनी राजगद्दी अपने भाई उज्जैन के विक्रमादित्य के नाम कर दी थी। भर्तृहरि बाद में गोरक्षनाथ के परमप्रिय शिष्य बन गये थे और भर्तृहरिनाथ के नाम से प्रसिद्ध हुए जिन्होंने वैराग्यपंथ चलाया।

गुरु गोरखनाथ के जीवन से सम्बन्धित एक रोचक कथा इस प्रकार है– भृर्तहरि राजा की प्रिय पिंगला रानी का स्वर्गवास हो गया। शोक के मारे राजा का बुरा हाल था। जीने की उनकी इच्छा ही समाप्त हो गई। वह भी रानी की चिता में जलने की तैयारी करने लगा। लोग समझा–बुझाकर थक गये पर वह किसी की बात सुनने को तैयार नहीं था। इतने में वहां गुरु गोरखनाथ आए। आते ही उन्होंने अपनी हांडी नीचे पटक दी और जोर–जोर से रोने लग गये। राजा को बहुत आश्चर्य हुआ। उसने सोचा कि वह तो अपनी रानी के लिए रो रहा है, पर गोरखनाथ जी क्यों रो रहे हैं। उसने गोरखनाथ के पास आकर पूछा, महाराज, आप क्यों रो रहे हैं? गोरखनाथ ने उसी तरह रोते हुए कहा, क्या करूं? मेरा सर्वनाश हो गया। मेरी हांडी टूट गई है। मैं इसी में भिक्षा मांगकर खाता था। हांडी रे हांडी।

इस पर राजा ने कहा, हांडी टूट गई तो इसमें रोने की क्या बात है? ये तो मिट्टी के बर्तन हैं। साधु होकर आप इसकी इतनी चिंता करते हैं। गोरखनाथ बोले, तुम मुझे समझा रहे हो। मैं तो रोकर काम चला रहा हूं। तुम तो एक मृत स्त्री के कारण स्वयं मरने के लिए तैयार बैठे हो। गोरखनाथ की बात का आशय समझकर राजा ने जान देने का विचार त्याग दिया। और गोरक्षनाथ जी को गुरु

धारण कर नाथ योगी विचार नाथ के रूप में प्रसिद्ध हुए। कहा जाता है कि राजकुमार बप्पा रावल जब किशोर अवस्था में अपने साथियों के साथ राजस्थान के जंगलों में शिकार करने के लिए गए थे, तब उन्होंने जंगल में संत गुरु गोरखनाथ को ध्यान में बैठे हुए पाया। बप्पा रावल ने संत के नजदीक ही रहना शुरू कर दिया और उनकी सेवा करते रहे। गोरखनाथ जी जब ध्यान से जागे तो बप्पा की सेवा से खुश होकर उन्हें एक तलवार दी जिसके बल पर ही चित्तौड़ राज्य की स्थापना हुई।

गोरखनाथ जी ने नेपाल और पाकिस्तान में भी योग साधना की। पाकिस्तान के सिंध प्रान्त में स्थित गोरख पर्वत का विकास एक पर्यटन स्थल के रूप में किया जा रहा है। इसके निकट ही झेलम नदी के किनारे राँझा ने गोरखनाथ से योग दीक्षा ली थी। नेपाल में भी गोरखनाथ से सम्बंधित कई तीर्थ स्थल हैं। उत्तरप्रदेश के गोरखपुर शहर का नाम गोरखनाथ जी के नाम पर ही पड़ा है। यहाँ पर स्थित गोरखनाथ जी का मंदिर आज भी दर्शनीय है।

गोरखनाथ जी से सम्बंधित एक कथा राजस्थान में बहुत प्रचलित है। राजस्थान के महापुरूष गोगाजी का जन्म गुरु गोरखनाथ के वरदान से हुआ था। गोगाजी की माँ बाछल देवी निःसंतान थी। संतान प्राप्ति के सभी यत्न करने के बाद भी संतान सुख नहीं मिला। गुरू गोरखनाथ गोगामेडी के टीले पर तपस्या कर रहे थे। बाछल देवी उनकी शरण में गईं तथा गुरू गोरखनाथ ने उन्हें पुत्र प्राप्ति का वरदान दिया और एक गुगल का फल प्रसाद के रूप में दिया। प्रसाद खाकर बाछल देवी गर्भवती हो गई और तदुपरांत गोगाजी का जन्म हुआ। गुगल फल के नाम से इनका नाम गोगाजी पड़ा। गोगाजी वीर और ख्याति प्राप्त राजा बने। गोगामेडी में गोगाजी का मंदिर एक ऊंचे टीले पर मस्जिदनुमा बना हुआ है, इसकी मीनारें मुस्लिम स्थापत्य कला का बोध कराती हैं। कहा जाता है कि फिरोजशाह तुगलक सिंध प्रदेश को विजयी करने जाते समय गोगामेडी में ठहरे थे। रात के समय बादशाह तुगलक व उसकी सेना ने एक चमत्कारी दृश्य देखा

कि मशालें लिए घोड़ों पर सेना आ रही है। तुगलक की सेना में हाहाकार मच गया। तुगलक के साथ आए धार्मिक विद्वानों ने बताया कि यहां कोई महान सिद्ध है जो प्रकट होना चाहता है। फिरोज तुगलक ने लड़ाई के बाद आते समय गोगामेडी में मस्जिदनुमा मंदिर का निर्माण करवाया। यहाँ सभी धर्मो के भक्तगण गोगा जी के दर्शनों हेतु भादो (भाद्रपद) मास में उमड़ पड़ते हैं। इन्हीं गोगाजी को आज जाहरवीर गोगा कहते हैं और राजस्थान से लेकर बिहार और पश्चिम बंगाल तक इनके श्रद्धालु रहते हैं।

डॉ. रामनाथ अघोरी : इसी परंपरा में योगिराज डॉ. रामनाथ अघोरी का नाम भी प्रमुखता से आता है, जिन्होंने नेपाल नरेश महाराज वीरेंद्र को अपनी हथेली पर भगवान शिव और पार्वती का दर्शन कराया था। अपने जीवन के पचास से अधिक वर्षों तक उन्होंने दुर्गम वन पर्वतों में भ्रमण किया और इस मध्य साधना करते हुए उन्होंने साइबेरिया के व्लादिवोस्तोक तक की यात्रा की। साथ ही उन्होंने अरबी क्षेत्रों, इराक, फारस, मध्य एशिया के ज़रिए चीन के माध्यम से तिब्बत में प्रवेश किया और वहां से हिंगलाज माता की ओर बढ़ गए। पुनः भारत में गिरनार पर्वत पर उन्होंने अपनी सर्वोच्च सिद्धियाँ प्राप्त कीं।

इसके अनन्तर कामाख्या के भूतनाथ श्मशान एवं नेपाल के पशुपतिनाथ श्मशान में निवास करते हुए उन्होंने अघोर पन्थ की बहुत जटिल क्रियाओं में दक्षता प्राप्त की तथा अघोरेश्वर की उपाधि को धारण किया। इसके बाद उन्होंने तिब्बत के साम्ये मठ की ओर प्रस्थान किया जो स्वयंभूनाथ, जिन्हें आचार्य पद्मसम्भव भी कहते हैं, उन्हीं के द्वारा स्थापित है, किन्तु वहाँ पर कनफटा दर्शनी गोरखपंथी होने के कारण उन्हें प्रवेश नहीं मिला। इस बात से निराश होकर वे नेपाल लौट आये जहां उनकी भेंट तिब्बूटीनाथ बाबा से हुई जो उन्हें बंगाल ले आये।

बंगाल के बकरेश्वर में रामनाथ अघोरी की मुलाकात व्योम शङ्कर अघोरी से हुई जो दो सौ से अधिक वर्ष के थे। उनका शरीर विशालकाय था, जटाएं

विकराल थीं। व्योम शङ्कर अघोरी आचार्य पद्मसम्भव की सीधी परम्परा के अन्तिम अघोर साधक थे और उनसे रामनाथ अघोरी जी ने बहुत सी विद्याएं सीखीं। इसके बाद उन्होंने तिब्बत के साम्ये मठ की ओर पुनः कदम बढ़ाए और इस बार उनका स्वागत हुआ। उस मठ में रहते हुए उन्होंने कई विद्याएं सीखीं और वहां के लोगों को पढ़ाई। बाद में समयानुसार नाथपन्थ के बाबा पीर कलानाथ से दीक्षित हुए।

बाबा डॉ. बीरनाथ अघोरी का भौतिक शरीर तो एक मुसलमान के यहाँ उत्पन्न हुआ। बाल्यावस्था में ही इन्होंने गृह त्याग कर दिया और औघड़ साधु बन गये। उसके पश्चात् अपने निजी गृह से अथवा परिवार से इनका कोई सम्बन्ध नहीं रहा क्योंकि उस वक्त जब इन्होंने डॉ. रामनाथ अघोरी से दीक्षा ली तो पूरा संसार ही इनका परिवार बन गया। इनकी श्रद्धा और सेवा से प्रसन्न होकर डॉ. रामनाथ अघोरी जी ने इन्हें अपना परम शिष्य बना लिया। बाबा रामनाथ अघोरी जी के शिष्यों में हरिनाथ जी पागल बाबा, विश्वनाथ जी सूरदास जी, भूतनाथ जी, नृसिंह नाथ जी, चेतनाथ जी, बालकनाथ जी, नेमीनाथ जी, डॉ. भभूतीनाथ जी, डॉ. त्यागीनाथ जी, ईशानाथ जी, अभयनाथ जी, चुनमुन नाथ जी, भोलानाथ जी, जुगलनाथ जी हैं। जिन्होंने अपने गुरु महाराज के सान्निध्य में कई वर्ष रहकर कठोर साधनाओं को सिद्ध किया है। बाबा रामनाथ अघोरी के शरीर के अन्तकाल में उनके साथ मात्र डॉ. बीरनाथ अघोरी ही थे और डॉ. बीरनाथ अघोरी के देहावसान के समय उनके साथ शिष्यों में मात्र औघड़ पीर श्री चन्द्रभूषण नाथ ही थे।

नाथ शब्द का अर्थ होता है स्वामी। भारत में नाथ योगियों की परंपरा बहुत ही प्राचीन रही है। नाथ समाज हिन्दू धर्म का एक अभिन्न अंग है। नौ प्रमुख नाथों की परंपरा से 84 नाथ सिद्ध हुए। नौ नाथों के नाम के संबंध में विद्वानों में कुछ मतभेद हैं। भगवान शंकर को आदिनाथ और दत्तात्रेय को आदिगुरु माना जाता है। इन्हीं से आगे चलकर नौ नाथ और नौ नाथ से 84 नाथ सिद्धों की परंपरा शुरू हुई। आपने अमरनाथ, केदारनाथ, बद्रीनाथ आदि कई तीर्थस्थलों के नाम

सुने होंगे। आपने भोलेनाथ, भैरवनाथ, गोरखनाथ आदि नाम भी सुने ही होंगे। गोगादेव, रामदेव आदि संत भी इसी परंपरा से थे। तिब्बत के सिद्ध भी नाथ परंपरा से ही थे।

सभी प्रधान सिद्ध नाथ साधुओं का मुख्य स्थान हिमालय की गुफाओं में है। नागा बाबा, नाथ बाबा और सभी कमंडल, चिमटा धारण किए हुए जटाधारी बाबा शैव और शाक्त संप्रदाय के अनुयायी हैं, लेकिन गुरु दत्तात्रेय के काल में वैष्णव, शैव और शाक्त संप्रदाय का समन्वय किया गया था।

नाथ संप्रदाय में भगवान् आदिनाथ और गुरु दत्तात्रेय के बाद सबसे महत्वपूर्ण नाम आचार्य मत्स्येंद्रनाथ का है, जो मीननाथ और मछन्दरनाथ के नाम से लोकप्रिय हुए। कौल ज्ञान निर्णय के अनुसार मत्स्येंद्रनाथ ही कौलमार्ग के प्रथम प्रवर्तक थे। कुलार्णव तन्त्र के अनुसार कुल का अर्थ है शक्ति और अकुल का अर्थ शिव। मत्स्येन्द्र के गुरु दत्तात्रेय थे।

प्राचीनकाल से चले आ रहे नाथ सम्प्रदाय को गुरु मत्स्येंद्रनाथ और उनके शिष्य गोरक्षनाथ (गोरखनाथ) ने पहली बार व्यवस्था दी। गोरखनाथ ने इस संप्रदाय के बिखराव और इस संप्रदाय की योग विद्याओं का एकत्रीकरण किया। दोनों गुरु और शिष्य को तिब्बती बौद्ध धर्म में महासिद्धों के रूप में जाना जाता है। मत्स्येन्द्रनाथ हठयोग के परम गुरु माने गए हैं जिन्हें मच्छरनाथ भी कहते हैं।

नाथ परंपरा की शुरुआत बहुत प्राचीन रही है, किन्तु गोरखनाथ से इस परंपरा को सुव्यवस्थित विस्तार मिला। दोनों को चौरासी सिद्धों में प्रमुख माना जाता है। काबुल, गांधार, सिंध, बलोचिस्तान, कच्छ और अन्य देशों तथा प्रांतों में यहां तक कि मक्का–मदीना तक श्रीगोरक्षनाथ ने दीक्षा दी थी और नाथ परंपरा को विस्तार दिया।

जनश्रुति के अनुसार एक बार श्रीमत्स्येन्द्रनाथजी भ्रमण करते हुए गोदावरी नदी के किनारे चन्द्रगिरि नामक स्थान पर पहुंचे और सरस्वती नाम की

स्त्री के द्वार पर भिक्षा मांगने लगे। नि:संतान स्त्री भिक्षा लेकर बाहर आई, लेकिन वह उदास थी। श्रीमत्स्येन्द्रनाथजी ने उसे विभूति (मतान्तर से फल) देकर कहा कि इसे खा लेना, पुत्र प्राप्ति होगी। लेकिन अनजान भय के कारण उस महिला ने सिद्ध विभूति को एक झोपड़ी के पास गोबर की ढेरी पर रख दिया।

12 साल बाद श्रीमत्स्येन्द्रनाथजी फिर वहीं पहुंचे और सरस्वती से उस बालक के बारे में पूछा। सरस्वती ने विभूति को गोबर की ढेरी पर रखने की बात बता दी। इस पर मत्स्येन्द्रनाथ ने कहा, 'अरे माई, वह विभूति तो अभिमंत्रित थी– निष्फल हो ही नहीं सकती। तुम चलो, वह स्थान तो दिखाओ।' उन्होंने अलख निरंजन की आवाज लगाई और गोबर की ढेरी से निकलकर 12 साल का एक बालक सामने आ गया। गोबर में रक्षित होने के कारण मत्स्येन्द्रनाथजी ने बालक का नाम गोरक्ष रखा और अपना शिष्य बनाकर अपने साथ ले गए। गोरखनाथ जी के जन्म के बारे में कई अन्य जनश्रुतियां भी हैं।

नाथ योगी गोरखनाथजी ने संस्कृत और लोकभाषा में योग संबंधी साहित्य की रचना की है– गोरक्ष–कल्प, गोरक्ष–संहिता, गोरक्ष–शतक, गोरक्ष–गीता, गोरक्ष–शास्त्र, ज्ञान–प्रकाश शतक, ज्ञानामृतयोग, महार्थ मंजरी, योग चिन्तामणि, योग मार्तण्ड, योग–सिद्धांत–पद्धति, हठयोग संहिता आदि।

गुरु गोरखनाथजी ने नेपाल और भारत की सीमा पर प्रसिद्ध शक्तिपीठ देवीपाटन में तपस्या की थी। उसी स्थल पर पाटेश्वरी शक्तिपीठ की स्थापना हुई। भारत के गोरखपुर में गोरखनाथ का प्रसिद्ध मंदिर है। इस मंदिर को यवनों और मुगलों ने कई बार ध्वस्त किया लेकिन इसका हर बार पुनर्निर्माण कराया गया। 9वीं शताब्दी में इसका जीर्णोद्धार किया गया। नेपाल और भारत की गोरखा नाम की सेना गुरु गोरक्षनाथ की रक्षा के लिए ही थी। दरअसल, नेपाल के शाह राजवंश के संस्थापक महाराज पृथ्वीनारायण शाह को गोरक्षनाथ से ऐसी शक्ति मिली थी जिसके बल पर उन्हें खंड–खंड में विभाजित नेपाल को एकजुट करने में सफलता मिली, तभी से नेपाल की राजमुद्रा पर श्रीगोरक्षनाथ नाम और राजमुकुटों में उनकी चरणपादुका का चिह्न अंकित है।

प्रसिद्ध गहिनीनाथ के गुरु गोरखनाथ थे। मान्यता है कि एक दिन गुरु गोरखनाथ अपने गुरु मछिन्दर नाथ के साथ तालाब के किनारे एक एकांत जगह प्रवास कर रहे थे, जहाँ पास ही में एक गाँव था। मछिंदरनाथ ने कहा कि मैं तनिक भिक्षा लेकर आता हूं तब तक तुम संजीवनी विद्या के बारे में तुमने आज तक जो सुना है ना उसकी सिद्धि का मंत्र जपो। यह एकांत में ही सिद्ध होती है। संजीवनी विद्या को सिद्ध करने को चार बातें चाहिए श्रद्धा, तत्परता, ब्रह्मचर्य और संयम। ये चारों बातें तुम में हैं। खाली एकांत में रहो, ध्यान से जप करो और संजीवनी सिद्ध कर लो। ऐसा कहकर मछिंदरनाथ तो चले गए और गोरखनाथ जप करने लगे।

वे जप और ध्यान कर ही रहे थे वहीं तालाब के किनारे बच्चे खेलने आ गए। तालाब की गीली–गीली मिट्टी को लेकर वे बैलगाड़ी बनाने लगे। बैलगाड़ी बनाने तक वो सफल हो गए, लेकिन बैलगाड़ी चलाने वाला मनुष्य का पुतला वे नहीं बना पा रहे थे। किसी लड़के ने सोचा कि ये जो आंख बंद किए बाबा हैं इन्हीं से कहें– बाबा–बाबा हमको गाड़ी वाला बनाके दीजिए। गुरु गोरखनाथ ने आंखें खोलीं और कहा कि अभी हमारा ध्यान भंग न करो फिर कभी देखेंगे। लेकिन वे बच्चे नहीं माने और फिर कहने लगे। बच्चों के आग्रह के चलते गोरखनाथ ने कहा– लाओ बेटे बना देता हूं। उन्होंने जप संजीवनी जप करते हुए ही मिट्टी उठाई और पुतला बनाने लगे। संजीवनी मंत्र चल रहा है तो जो पुतला बनाना था, बैलगाड़ी वाला वो पुतला बनाते गए। बनाते–बनाते नन्हा–सा पुतला, उसके अंग–प्रत्यंग बनते गए और मंत्र प्रभाव से वो पुतला सजीव होने लगा, उसमें जान आ गई। जब पूरा हुआ तो वो पुतला बोला – प्रणाम। गुरु गोरखनाथजी चकित रह गए। बच्चे घबराए कि ये पुतला कैसे जी उठा? वह पुतला सजीव होकर आसन लगा के बैठ गया। बच्चे तो चिल्लाते हुए भागे। भूत–भूत मिट्टी में से भूत बन गया। जाकर उन बच्चो ने गांव वालों से कहा और गांव वाले भी उस घटना को देखने जुट गए। सभी ने देखा बच्चा बैठा है। गांव वालों ने गोरखनाथ को प्रणाम किया। इतने में गुरु मछिंद्रनाथ भिक्षा लेकर आ गए। उन्होंने भी देखा और फिर अपने कमंडल से दूध निकालकर उस बालक को दूध पिलाया। उन्होंने सभी दूसरे बच्चों को भी दूध

पिलाया। फिर दोनों ने सोचा अब एकांत, जप, साधना के समय वहां से विदा होना ही अच्छा। दोनों नाथ बच्चे को लेकर जाने लगे।

इतने में गांव के ब्राह्मण और ब्राह्मणी जिनको संतान नहीं थी उन्होंने आग्रह किया कि आप इतने बड़े योगी हैं तो हमारा भी कुछ भला करिए नाथ जी! ब्राह्मण का नाम था मधुमय और उनकी पत्नी का नाम था गंगा। गांव वालों ने कहा कि आपकी कृपा से इन्हें संतान मिल सकती है। गोरखनाथ और मछिन्द्रनाथ भी समझ गए। उन्होंने कहा तुम इस बालक को क्यों नहीं गोद ले लेते। कुछ सोच–विचार के बाद दोनों ने उक्त बालक को गोद लेना स्वीकार कर लिया। यही बालक गहिनीनाथ योगी के नाम से सुप्रसिद्ध हुआ। यह कथा है कनक गाँव की, जहाँ आज भी इस कथा को याद किया जाता है। गहिनीनाथ की समाधि महाराष्ट्र के चिंचोली गांव में है, जो तहसील पटोदा और जिला बीड़ के अंतर्गत आता है। मुसलमान इसे गैबीपीर कहते हैं।

जालंधर (जालिंदरनाथ) नाथ : इनके गुरू आदिनाथ जी थे। एक मान्यता के अनुसार हस्तिनापुर में बृहद्रथ नाम के राजा सोमयज्ञ कर रहे थे। अंतरिक्षनारायण ने यज्ञ के भीतर प्रवेश किया। यज्ञ की समाप्ति के बाद एक तेजस्वी बालक की प्राप्ति हुई। यही बालक जालंधर कहलाया।

राजस्थान के जालौर के पास आथूणी दिस में उनका तपस्या स्थल है। यहाँ पर मारवाड़ के महाराजा मानसिंह ने एक मंदिर बनवाया है। जोधपुर में महाराजा मानसिंह पुस्तक प्रकाश संग्रहालय में अनेक हस्तलिखित ग्रंथ हैं, जिसमें जालंधरनाथ का जीवन और उनके कनकाचल में पधारने का जिक्र है। चंद्रकूप सूरजकुंड कपाली नामक यह स्थान प्रसिद्ध है। जालंधर के तीन तपस्या स्थल हैं– गिरनार पर्वत, कनकाचल और रक्ताचल। उनके होने संबंधी दस्तावेजों के मुताबिक वे विक्रम संवत 1451 में राजस्थान में पधारे थे। मत्स्येन्द्रनाथ, गोरक्षनाथ के समान ही जालंधर नाथ और कृष्णपाद की महिमा मानी गई। इनके गुरु जालंधरनाथ थे। जालंधरनाथ मत्स्येंद्रनाथ के गुरु भाई माने जाते हैं। कृष्णपाद को कानीफनाथ भी कहा जाता है।

पुजारी चन्द्र भूषण नाथ (मिश्र) का संक्षिप्त जीवन परिचय तथा बाबा बीरनाथ अघोरी के साथ बिताये कुछ अविस्मरणीय पल

डॉ. रामनाथ अघोरी जी के पौत्र शिष्य, डॉ. बीरनाथ अघोरी जी के शिष्य चन्द्रभूषण नाथ (मिश्र) जी का जन्म 18 मई, 1961 ई को शाकद्वीपीय ब्राह्मण परिवार एवं भारद्वाज गोत्र के अन्तर्गत स्व० भृगुनन्दन मिश्र जी के घर पर कोशडीहरा (हरिहरगंज), पलामू में हुआ। आर्थिक विपन्नता के कारण किशोरावस्था में ही कुछ स्वायत्तता से करने की इच्छा के कारण तथा अन्य पारिवारिक कारणों से इन्होंने गृहत्याग करके बंगाल में दैनिक विश्वमित्र में सेवा देना प्रारम्भ किया, साथ ही यादवपुर विश्वविद्यालय से प्रिंटिंग टेक्नोलॉजी में दक्षता प्राप्त करते रहे। उस समय बंगाल में वामपंथियों का भीषण प्रभाव था जहाँ नास्तिकता और भौतिकता चरम पर थी। उस समय स्थानीय ट्रेड यूनियन के जनरल सेक्रेटरी रहते हुए कुछ राजनैतिक विसंगति के कारण चन्द्रभूषण नाथ जी ने अपनी नौकरी से त्यागपत्र दे दिया। कुछ वर्षों तक इधर उधर के अस्थायी कार्यों के बाद कलकत्ता के दक्षिणेश्वरी काली मन्दिर में पहुंचे। उस समय इनकी अवस्था लगभग 27–28 वर्ष की थी। वहाँ पर भगवती का दर्शन किया और निकट ही श्री रामकृष्ण परमहंस और शारदा माई की प्रतिमा को देखकर पुजारी जी से उनके सन्दर्भ में जिज्ञासा व्यक्त की। उस समय मन्दिर में भीड़ न होने से पुजारी जी ने भी दो घण्टे तक विस्तार से सहृदयतापूर्वक चन्द्रभूषण मिश्र को उस स्थल का महत्त्व एवं इतिहास का परिचय दिया। इसका यह प्रभाव हुआ कि चन्द्रभूषण के अन्दर बैठी हुई वामपंथी विचारधारा सर्वथा निरस्त हो गयी और भगवती तथा सनातन धर्म के प्रति इनके मन में एक नवीन निष्ठा तथा विश्वास का उदय हुआ।

अन्ततः चन्द्रभूषण जी ने पुजारी जी से कहा – "जहां पर रामकृष्ण परमहंस बैठकर साधना करते थे, हमें उस स्थान पर ले चलें, इस हेतु हम

आपके आभारी रहेंगे।" पुजारी जी ने इनका हाथ पकड़ा और लगभग आधे किलोमीटर बाएं स्थित श्मशान में उस स्थान पर ले गए। चन्द्रभूषण जी की नौकरी तो जा ही चुकी थी, निकट ही उन्होंने अस्थायी व्यवस्था कर रखी थी। घर वालों को स्थिति ज्ञात नहीं थी। मार्ग में भूख लगने पर "झालमुढ़ी" खरीद लेते थे और श्मशान में ही जाकर खाते थे और अधजली चिताओं पर फेंकते रहते थे। एक दिन एक अधजले मुर्दे को देखकर इन्हें लगा कि इनसे अधिक मुर्दे को भूख लगी है। फिर क्या था, इन्होंने झालमुढ़ी से भरा वह खोमचा उठाकर मुर्दे पर दे मारा। मारते ही मानो एक छोटा विस्फोट से हुआ और वह खोमचा मुर्दे के साथ ही प्रज्वलित हो उठा। उसमें किसी कम्पनी का विज्ञापन झलक रहा था। चन्द्रभूषण जी ने वह विज्ञापन पढ़ा और स्वयं को उस नौकरी के लिए सर्वथा उपयुक्त समझते हुए आवेदन कर दिया और नियुक्त भी हो गए। वह "पूर्वाञ्चल प्रहरी" का विज्ञापन था जहां मिश्र जी प्रिंटिंग सुपरवाइजर बने।

एक दिन गुवाहाटी में ही लाचेतनगर स्थित अपने कॉटेज में रहते हुए इन्होंने स्वप्न देखा कि कोई वृद्धा माता बोल रही हैं कि "बेटा ! तेरी नौकरी मैंने लगा दी, नौकरी लगने के बाद इधर आता नहीं है ?" अगले दिन प्रातःकाल इन्होंने एक पड़ोसी से पूछा कि यहां कोई मन्दिर आदि है क्या ? उसने मानो उपहास सा करते हुए बताया कि निकट ही कामाख्या पीठ है। और चन्द्रभूषण जी चल पड़े भगवती के दर्शन को। इसी प्रकार से अनायास ही अघोर मार्ग के साधनात्मक पन्थ में इनका प्रवेश हुआ। इस मध्य से भूतनाथ श्मशान में भी इन्होंने अपना समय बिताया।

1997 ई० में चन्द्रभूषण मिश्र जी का आगमन रांची में हुआ जहां हरमू श्मशान में एक साधना सम्पादित करने लगे। वहाँ एक नीम के वृक्ष के नीचे मृत बालकों को दफनाया जाता था जहां इन्होंने इकतालीस दिनों की

साधना का व्रत लेकर अपनी क्रिया आरम्भ की। चालीसवें दिन वहां एक वृद्ध का आगमन हुआ और उसने बालक के दबे शरीर को खोदना प्रारम्भ किया। इस बात पर इन दोनों में बड़ी भीषण हिंसक झड़प हुई और इसी मध्य उसका हाथ पकड़कर चन्द्रभूषण मिश्र सामने ही एक जलती चिता पर आरूढ़ हो गए, किन्तु अगले ही क्षण उस वृद्ध के गले लग गए। **वे वृद्ध थे नटेश्वरी पन्थ के महान साधक अघोरेश्वर रामनाथ अघोरी के प्रिय शिष्य डॉ. बीरनाथ अघोरी।** बीरनाथ बाबा ने चन्द्रभूषण मिश्र जी को गले लगाते हुए कहा, बेटा मैं तुझे ही खोज रहा था। इस प्रकार गुरु शिष्य की प्रथम भेंट हुई और चन्द्रभूषण मिश्र जी का पूरा जीवन और स्थिति ही बदल गयी।

यहां एक घटना उल्लेखनीय है कि चन्द्रभूषण मिश्र जी अघोरी होते हुए भी सर्वथा शाकाहारी रहे और उनके गुरु बाबा बीरनाथ अघोरी सर्वाहारी रहे। 2004 में कामाख्या में दोनों गुरु शिष्य बैठे हुए थे। बाबा बीरनाथ अघोरी ने कपाल आगे बढ़ाया और कहा कि खाओ। उसमें मिश्र जी ने देखा तो मछली थी। मिश्र जी ने कहा कि ये तो मछली है, मैं तो शाकाहारी हूँ। इस पर बाबा ने कहा कि वो क्या है, ये छोड़ो। मैंने कहा कि निकालो और खाओ। मिश्र महोदय बताते हैं कि उस समय जो मछली दिख रही थी, निकाल कर खाने में रसगुल्ले में परिवर्तित हो गयी। **यह भावप्रधानो शिवः** का उत्कृष्ट उदाहरण है।

इस घटना के पश्चात् सन् 2005 में एक अन्य घटना में दोनो गुरु शिष्य की मुलाकात हुई। मुलाकात भी ऐसी कि जो अविस्मरणीय है। हुआ यूँ था कि चन्द्रभूषण हरमू श्मशान में एक चिता दाह देख रहे थे। जैसा कि आज का समाज हो गया है शव के साथ श्मशान तक सैकड़ों लोग जाते हैं परन्तु मुखाग्नि होते ही अधिकांश लोग सरक लेते हैं। घर के दो–चार लोग बैठे थे और चन्द्रभूषण वहाँ टहल रहे थे। दिमाग में सोच यही चल रहा था कि क्या हो

गया इस दुनिया को। अकस्मात चन्द्रभूषण ने देखा कि उनके गुरु श्री बीरनाथ अघोरी चिथड़ों में त्रिशूल लिये हाथ में आ रहे हैं। उन्होंने आदेश किया, परन्तु बाबा की दृष्टि शव के उठे हुए हाथ पर थी। एक झटके में बाबा ने शव के हाथ को अपने हाथ में लिया और उसका ग्रास बना लिया। चन्द्रभूषण को तो मानो तो काटो तो खून नहीं की स्थिति हो गई। तभी उनके गुरु उनके पास आये और आदेश का जबाव दिया। बाबा को देखकर तो जो दो–चार लोग थे वो भी पलायन कर गए। तब बाबा ने चन्द्रभूषण को बताया बेटे दुनिया में कोई किसी का नहीं है। अगर कुछ है तो वह है 'आदेश' ("आ"आत्मा। "दे"देवात्मा/परमात्मा। "श"शरीरात्मा/जीवात्मा)। और जब शरीर से आत्मा निकल गई तो उस शरीर का कोई मोल नहीं है।

इस घटना के कुछ वर्ष के बाद भूतनाथ में एक जलती चिता के सामने चन्द्रभूषण मिश्र और बीरनाथ अघोरी (एक शिष्य विनोद सिंह) के साथ उपस्थित थे। अचानक से शव का हाथ उठा तो बाबा ने उसे खींच कर भक्षण करना प्रारम्भ कर दिया। इस घटना की शिकायत परिजनों ने लाल बाजार थाने में कर दी जिसके बाद प्रशासन ने आकर बाबा को बहुत प्रताड़ित किया। अपने साथ थाने में ले गए और बन्द कर दिया। बाबा की जमानत कराने के लिए जब चन्द्रभूषण मिश्र जी और विनोद सिंह जी गए तो थानाध्यक्ष से इनका बड़ा विवाद हुआ। इतने में बाबा सामने से आते हुए दिखे और उन्होंने आकर पूछा, मैं जा सकता हूँ? इस पर थानाध्यक्ष को आश्चर्यमिश्रित क्रोध हुआ और उसने फिर से बाबा को जाकर बन्द कर दिया और आकर मिश्र महोदय एवं सिंह जी से विवाद करने लगे। कुछ देर बाद बाबा स्वतः आते दिखे। इस प्रकार कुछ एक बार यह क्रम दुहराया जाता रहा। थानाध्यक्ष बार बार बाबा को बंद करते और बाबा बार बार स्वतः वहां से बाहर निकल आते। अन्ततः प्रशासन ने बाबा को बांधने में स्वयं को असमर्थ समझकर उन्हें छोड़ दिया। बाबा बीरनाथ अघोरी जी ने अपने

जीवन के अन्तिम पाँच वर्ष महाश्मशानकाली मन्दिर, चन्द्र अघोर आश्रम में बिताए, जिसमें चन्द्रभूषण नाथ (मिश्र) ने पूरी भक्ति और निष्ठा के साथ अपने परिवार एवं सहयोगियों समेत बाबा की सेवा की। बाबा की कृपा से ही मिश्र महोदय ने बाबा की वय एवं रोगगत दैहिक पीड़ा को अपने ऊपर प्रत्यारोपित करके नष्ट करने का प्रयास भी किया जिस हेतु स्वयं बाबा बीरनाथ ने इन्हें रोक दिया। इसी क्रम में एक घटना बाबा के शरीर के त्याग के पूर्व 12 दिसम्बर की भी है। जिसके लिए बाबा ने चन्द्रभूषण को सख्त हिदायत दी कि दोबारा ऐसा नहीं करना। वस्तुतः बाबा ने रामकृष्ण परमहंस की परंपरा का उदाहरण देकर समझाया कि लिया हुआ दुख भोग स्वयं ही भोगना पड़ता है। किसी अन्य शरीर में दुःख भोग का प्रत्यावर्तन आवागमन से मुक्ति में बाधक बनता है। बाबा चाहते तो अपने यौगिक चमत्कार से दुःख भोग की पीड़ा कम कर सकते थे लेकिन उन्होंने तत्वज्ञान देते हुये कहा कि भौतिक शरीर के अंगों की कार्यक्षमता की सीमा तय है। उसमें हस्तक्षेप करना प्रकृति के नियमों में हस्तक्षेप के समान है। इसलिए उन्होंने अपना दुःख भोग स्वयं ही भोगा और प्रकृति के विधान के अनुसार अपना शरीर छोड़ दिया। शरीर छोड़ने के कुछ माह पूर्व ही उन्होंने चन्द्रभूषण मिश्र को कड़ा दान करके औघड़ परम्परा का निर्वहन किया। ठीक वैसे ही जैसे दादा गुरु डॉ. रामनाथ अघोरी ने गुरु बीरनाथ अघोरी के साथ किया था।

चन्द्रभूषण जी बताते हैं कि उनके एकमात्र पुत्र की शादी भी बाबा ने ही करवायी और शादी में पिता की भूमिका निभाई। बाबा ने पितृवत सभी संस्कारों से चन्द्रभूषण मिश्र को विलग करते हुए खुद ही सारी रस्में निभाई और जब तक वे वेदी के पास रहे अनेकानेक चमत्कारों से उपस्थित जन को चमत्कृत करते रहे। उनकी मंशा चमत्कार दिखाने की नहीं थी बल्कि यह उनकी दिव्यता थी जिससे आम जन मोहित हो जाते थे।

बाबा बीरनाथ का जन्म मोतीपुर, देवरिया में हुआ था और देहावसान महाश्मशानकाली मन्दिर, चन्द्र अघोर आश्रम, रांची में हुआ। 13 दिसम्बर, 2019 को बाबा बीरनाथ की माताजी का देहावसान हुआ और 14 दिसम्बर की वह सुबह कभी भुलाये भुलाई नहीं जा सकती, जिस सुबह बाबा चन्द्रभूषण की गोद में अपने नश्वर शरीर का त्याग कर परमतत्व में विलीन हो गये।